Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 7.671
January to March 2024, E-Journal, Vol. I, Issue XLV

न्यायिक पुनरावलोकन का भारतीय संदर्भ में विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. शोभा गौतम*

*सह आचार्य (राजनीति विज्ञान) से.मु.मा. राजकीय कन्या महाविद्यालय, भीलवाड़ा (राज.) भारत

शोध सारांश – न्यायिक पुनरावलोकन न्यायपालिका की एक महत्वपूर्ण शक्ति है। भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में न्यायपालिका की यह शक्ति और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है । न्यायपालिका को प्राप्त न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति न केवल नागरिकों के शासन व्यवस्था में विश्वास को बनाए रखने में सहायक है बल्कि सरकार के विभिन्न अंगों के मध्य संतुलन चक्र का भी काम करती है । यह संघात्मक व्यवस्था एवं नागरिकों के मूल अधिकारों की रक्षा कर भारतीय संविधान के संरक्षण का कार्य करती है। प्रस्तुत शोध पत्र में सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालय को प्राप्त न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति का मूल्यांकन किया गया है तथा अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय को प्राप्त न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति के साथ उसका तुलनात्मक विश्लेषण किया गया है। अनेक आलोचनाओं के उपरांत भी न्यायपालिका की यह शक्ति न्यायपालिका और शासन व्यवस्था में नागरिकों के विश्वास को बनाए रखने में सहायक सिद्ध हुई है। वर्तमान समय में न्यायपालिका को प्राप्त न्यायिक सक्रियता न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति का ही अग्रिम कदम है।

शब्द कुंजी – संघात्मक, संतुलन चक्र, न्यायिक सक्रियता मूल अधिकार।

प्रस्तावना – न्यायिक समीक्षा की शक्ति किसी भी लोकतंत्र की न्यायिक प्रणाली का एक महत्वपूर्ण पहलू है। भारत में सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालय को न्यायिक पुनरावलोकन का अधिकार दिया गया है न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति के माध्यम से न्यायपालिका भारत में संघात्मक व्यवस्था एवं मूल अधिकारों की रक्षा करने के साथ-साथ संविधान के विभिन्न अंगों के मध्य संतुलन बनाए रखने का कार्य भी करती है विगत वर्षों में भारतीय राजनीति में संविधान के अन्य अंगों की तुलना में न्यायपालिका की भूमिका बड़ी है जिससे कि न्यायपालिका की न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति को भी बल मिला है प्रस्तुत शोध पत्र में भारत में न्यायपालिका की न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति के विविध आयामों पर चर्चा करते हुए इसकी प्रासंगिकता का समसामयिक परिपेक्ष में मूल्यांकन किया गया है।

न्यायिक पुनरावलोकन का अर्थ – न्यायिक पुनरावलोकन का तात्पर्य सर्वोच्च न्यायालय द्वारा संविधान तथा उसकी सर्वोच्चता की रक्षा करने की व्यवस्था से है यह न्यायपालिका की वह क्षमता जिसके द्वारा वह सरकार की कार्यपालिका, विधायिका या प्रशासनिक शाखाओं द्वारा बनाए गए किसी कानून या निर्णय के संवैधानिक सिद्धांतों के अनुरूप होने का निर्धारण करती है, न्यायिक समीक्षा कहलाती है । सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालयों के पास यह अधिकार सुरक्षित है कि यदि वह कानून या निर्णय गैरकानूनी पाया जाता है तो उसे अमान्य घोषित कर दें।

भारतीय संविधान में न्यायिक पुनरावलोकन का आधार – भारतीय संविधान में कहीं भी संविधान की सर्वोच्चता का उल्लेख नहीं किया गया है लेकिन ऐसा होते हुए भी भारतीय संविधान संविधान के सर्वोच्चता के सिद्धांत पर आधारित है। भारतीय शासन व्यवस्था में शासन के अंग अपनी शक्ति संविधान से ही प्राप्त करते हैं। संविधान में शासन के प्रत्येक अंग के लिए सीमाएं निश्चित की है और शासन के इन अंगों की शक्तियों को संविधान में बताई गई संशोधन प्रक्रिया के अलावा अन्य किसी उपबंध से परिवर्तित नहीं किया जा सकता। भारत में न्यायिक पुनरावलोकन की आवश्यकता संविधान की सर्वोच्चता के सिद्धांत और संघीय समानता को बनाए रखने के लिए तथा नागरिकों के मूल अधिकारों की रक्षा के लिए है।

भारतीय संविधान में न्यायिक पुनरावलोकन से संबंधित उपबंध– भारतीय संविधान के अनुच्छेद 13 (1) के अनुसार इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले भारत के राज्य क्षेत्र में प्रवृत्त सभी विधियां उस मात्रा तक शून्य होगी जिस सीमा तक वे इस भाग के उपबंधों से असंगत है।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 13 (2)के अनुसार राज्य ऐसी कोई विधि नहीं बनाएगा जो इस भाग द्वारा प्रदत अधिकारों को छीनती है या न्यून करती है और इस खंड के उल्लंघन में बनाई गई प्रत्येक विधि उल्लंघन की मात्रा तक शून्य होगी।

उपर्युक्त अनुच्छेद मौलिक अधिकारों के संबंध में सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति प्रदान करते हैं।

संविधान के अनुच्छेद 131 मे सर्वोच्च न्यायालय की आरंभिक अधिकारिता का उल्लेख है ।

और संविधान के अनुच्छेद 132 में कुछ मामलों में उच्च न्यायालयों से अपीलों में उच्चतम न्यायालय की अपीली अधिकारिता का उल्लेख है। ये अनुच्छेद सर्वोच्च न्यायालय को संघीय तथा राज्य सरकार द्वारा निर्मित विधियों के पुनर्विलोकन का अधिकार देते हैं।

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 246 केंद्र और राज्यों के मध्य विधि निर्माण की शक्तियों के विभाजन का स्वरूप निश्चित करता है उपर्युक्त अनुच्छेद सर्वोच्च न्यायालय को केंद्र और राज्य सरकार द्वारा विधि निर्माण

की शक्तियों के संदर्भ में न्यायिक पुनरावलोकन का अधिकार प्रदान करते हैं।

संविधान के अनुच्छेद 226(1) के अनुसार – अनुच्छेद 32 में किसी बात के होते हुए भी प्रत्येक उच्च न्यायालय को उन राज्यक्षेत्रो में सर्वत्र, जिनके संबंध में वह अपनी अधिकारिता का प्रयोग करत है ,भाग 3 द्वारा दिए गए अधिकारों में से किसी को प्रवर्तित कराने के लिए और किसी अन्य प्रयोजन के लिए उन राज्यक्षेत्रो के भीतर किसी व्यक्ति या प्राधिकारी को या समुचित मामलों में किसी सरकार को ऐसे निर्देश, आदेश या रिट जिनके अंतर्गत बंदी प्रत्यक्षीकरण ,परमादेश ,प्रतिषेध अधिकार पृच्छा और उत्प्रेषण रिट है, या उनमें से कोई निकालने की शक्ति होगी।

न्यायपालिका द्वारा जारी रिट

बंदी प्रत्यक्षीकरण – यह उस मामले में लागू होती है जहां किसी व्यक्ति के बारे में कहा जाता है कि उसे अवैध रूप से बंदी बनाया गया है ।रिट को जारी करने का अर्थ है की बंदी बनाने वाले प्राधिकारी या व्यक्ति को आदेश दिया जाता है कि वह बंदी बनाए गए व्यक्ति को न्यायालय के सामने प्रस्तुत करें और निरोध का कारण बताएं ताकि न्यायालय उसकी वैधता या अवैधता का निर्धारण कर सके। यदि निरोध को अवैध पाया जाता है तो निरोध व्यक्ति को तत्क्षण आजाद कर दिया जाता है।

परमादेश – यह एक नियंत्रण है जिसे न्यायालय द्वारा सार्वजनिक अधिकारियों को जारी किया जाता है ताकि उनसे उनके कार्यों और उसे न करने के संबंध में पूछा जा सके। इसे किसी भी सार्वजनिक इकाई, परिषद, अधीनस्थ न्यायालय, पंचायत या सरकार के खिलाफ समान उद्देश्य के लिए जारी किया जा सकता है।

प्रतिषेध – उच्चतम न्यायालय किसी अवर न्यायालय को जारी करता है और उसका उद्देश्य होता है उसे उसकी अधिकारिता का उल्लंघन करने से मना किया जाए ।यह केवल न्यायिक और अर्ध न्यायिक निकायों के विरुद्ध जारी की जाती है प्रशासनिक एजेंसियों के खिलाफ नहीं।

उत्प्रेषण – यह आज्ञा पत्र किसी विवाद को निम्न न्यायालय से उच्च न्यायालय में भेजने के लिए जारी किया जाता है ।

अधिकार पृच्छा – जब कोई व्यक्ति ऐसे पदाधिकारी के रूप में कार्य करने लगता है जिसके रूप में कार्य करने का उसे वैधानिक रूप से अधिकार नहीं है तो न्यायालय इस रिट के द्वारा उस व्यक्ति से पूछता है कि वह किस आधार पर इस पद पर कार्य कर रहा है और जब तक इस प्रश्न का संतोषजनक उत्तार नहीं देता वह कार्य नहीं कर सकता।

भारत और अमेरिका में न्यायिक पुनरावलोकन की शक्तियों की तुलना– भारत में न्यायिक पुनरावलोकन का क्षेत्र अमेरिका जितना व्यापक नहीं है ।इसका कारण यह है कि अमेरिकी संविधान में कानून की उचित प्रक्रिया शब्दावली को अपनाया गया है लेकिन भारतीय संविधान में कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया शब्दावली को अपनाया गया है ।संविधान में की गई इस व्यवस्था के आधार पर अमेरिकी सर्वोच्च न्यायालय किसी भी कानून की वैधानिकता की जांच दो बातों के आधार पर कर सकता है पहले संघ या राज्य जिसके भी विधानमंडल ने उस कानून को बनाया उसके द्वारा इसका निर्माण उसके कानून निर्माण की क्षमता के अंतर्गत था या नहीं और दूसरा वह कानून की उचित प्रक्रिया की शर्तों को पूरा करता है या नहीं किंतु भारत में सर्वोच्च न्यायालय केवल इसी आधार पर किसी कानून की वैधानिकता की जांच कर सकता है कि जिस राज्य के विधान मंडल ने यह कानून बनाया वह इसका निर्माण करने में सक्षम है या नहीं।

अमेरिकी संविधान के अत्यधिक संक्षिप्त होने तथा अमेरिका के अधिकार पत्र के निरपेक्ष शब्दावली में होने के कारण भी अमेरिका की न्यायपालिका के न्यायिक पुनरावलोकन का क्षेत्राधिकार भारत की तुलना में व्यापक है।

सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालय की अधिकारिता शक्ति में अंतर– सर्वोच्च न्यायालय की तुलना में उच्च न्यायालय की रिट निकालने की अधिकारिकता अधिक विस्तारवान है उच्चतम न्यायालय तभी रिट निकाल सकता है जब किसी मूल अधिकार का उल्लंघन हुआ हो ।उच्च न्यायालय मूल अधिकार के मामले में तो रिट निकाल सकता ही है वह सामान्य विधिक अधिकार के उल्लंघन के मामले में भी रिट निकाल सकता है यदि सुस्थापित सिद्धांतों के अनुसार ऐसे मामलों मे रिट ही उचित उपचार है।

सर्वोच्च न्यायालय द्वारा न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति का प्रयोग– भारत में सबसे पहले निवारक नजरबंदी कानून के खंड 14 को सर्वोच्च न्यायालय ने अवैध कर दिया। 1967 के गोलकनाथ केस में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि संसद को मूल अधिकारों में परिवर्तन का कोई अधिकार नहीं है। 1969 में बैंकों के राष्ट्रीयकरण अधिनियम को संविधान के अनुच्छेद 19 और 31 का विरोधी घोषित कियास 1973 के मिनर्वा मिल्स केस में सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट किया कि संसद मूल अधिकारों में परिवर्तन कर सकती है लेकिन संविधान के मूल ढांचे में परिवर्तन नहीं कर सकती सर्वोच्च न्यायालय ने संविधान के 42 में संविधान संशोधन के अधीन संविधान के संशोधित रूप के 31 बी को भी रद्द कर दिया।

इस फैसले ने न्यायिक समीक्षा की शक्ति को पुन: स्थापित किया और यह सिद्ध किया कि न्यायिक समीक्षा संविधान का एक अनिवार्य अंग है। इसमें कहा गया कि संविधान की मूल संरचना के विपरीत किसी भी कानून को रद्द किया जा सकता है।मेनका गांधी बनाम भारत संघ (1978) : सर्वोच्च न्यायालय ने जीवन और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार की गारंटी देने वाले अनुच्छेद 21 के दायरे का विस्तार किया। इस मामले में, न्यायालय ने अनुच्छेद 21 की व्याख्या करते हुए विदेश यात्रा के अधिकार को भी इसमें शामिल किया और इस अधिकार का उल्लंघन करने वाले कानून को रद्द कर दिया, जिससे मौलिक अधिकारों की रक्षा में न्यायिक समीक्षा की शक्ति प्रदर्शित हुई।1983 में सर्वोच्च न्यायालय ने फौजदारी कानून की धारा 330 बी को अवैध कर दिया। 1991 में सर्वोच्च न्यायालय ने दल बदल विरोधी अधिनियम को वेधा कर दिया तथा राष्ट्रीय मोर्चा की सरकार को मंडल कमीशन की सिफारिश को उचित बताया।

न्यायिक समीक्षा की आलोचना – सर्वोच्च न्यायालय द्वारा न्यायिक पुनरावलोकन के प्रयोग पर एक प्रमुख आपत्ति यह की जाती है कि सर्वोच्च न्यायालय अपने पूर्व निर्णयो में अनवरत परिवर्तन करता रहा है जिसके परिणाम स्वरुप संवैधानिक कानून की समस्त व्यवस्थाओं के प्रति भ्रांतियां उत्पन्न हुई है ।उदाहरण के लिए 1952 में शंकरी प्रसाद और 1965 में सज्जन सिंह के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने इस बात को स्वीकार किया कि संसद मूल अधिकारों सहित संविधान के किसी भी भाग में संशोधन कर सकती है यदि इस संबंध में निर्धारित प्रक्रिया का पालन किया जाए किंतु 1967 के गोलकनाथ विवाद में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि संसद को संविधान के भाग 3 के किसी उपबंध को इस तरह से संशोधित करने का अधिकार प्राप्त नहीं होगा जिससे की मौलिक अधिकार सीमित हो जाए ।इसी

प्रकार 1969 के गुजरात राज्य बनाम शांतिलाल मंगलदास के विवाद में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि संविधान के चतुर्थ संशोधन के बाद क्षतिपूर्ति की पर्याप्तता या अपर्याप्तता विचार करना न्यायालय के क्षेत्राधिकार के बाहर है लेकिन 1969 में ही बैंक राष्ट्रीयकरण अधिनियम को सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती दी गई तो सर्वोच्च न्यायालय ने इसे इस आधार पर अवैध घोषित कर दिया कि इसमें निहित क्षतिपूर्ति के सिद्धांत अप्रासंगिक है। सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा जिस प्रकार न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति का प्रयोग किया गया उसे यह स्पष्ट है कि सर्वोच्च न्यायालय अपनी संवैधानिक सेवाओं का अतिक्रमण करते हुए भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में वह भूमिका अदा करने का प्रयास कर रहा है जो कि संविधान निर्माता उसे नहीं देना चाहते थे ।इसके अतिरिक्त न्यायिक पुनरावलोकन के कारण सदैव इस बात का भय रहता है कि कहीं संसद द्वारा निर्मित कानून और शासन द्वारा अपनाई गई नीति न्यायपालिका द्वारा अवैधा घोषित नही कर दी जाए इससे सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन में अस्थिरता का वातावरण बना रहता है। न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति ने संसद और न्यायपालिका के मध्य संघर्ष की स्थिति को भी जन्म दिया है।

न्यायिक पुनरावलोकन का महत्व

न्यायिक समीक्षा के कुछ मुख्य लाभ निम्नलिखित हैं:

संवैधानिक सर्वोच्चता को बरकरार रखता है:

न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति यह सुनिश्चित करती है कि सभी सरकारी गतिविधियों एवं कानून संविधान में निहित मूल्य एवं सिद्धांतों के अनुरूप हो।

नियंत्रण एवं संतुलन– न्यायपालिका न्यायिक पुनरावलोकन के माध्यम से सरकार के सरकार के विधायी एवं कार्यपालिका के अंगों पर नियंत्रण रखती है। इससे सत्ता का संतुलन बना रहता है और किसी भी शाखा को अत्यधिाक शक्तिशाली होने या अपने अधिकार के दुरुपयोग से रोका जा सकता है।

सत्ता के दुरुपयोग को रोकता है यह कार्यपालिका और विधायिका को अपनी शक्ति का दुरुपयोग करने से रोकने में सहायता करती है। इस प्रकार, राज्य में तानाशाही की संभावना को टाला जा सकता है।

नागरिकों के अधिकारों का संरक्षण: न्यायिक पुनरावलोकन व्यक्ति के मूल अधिकारों की राज्य एवं दूसरे व्यक्तियों द्वारा हनन करने से रोकने का कार्य करती है।

संघीय संतुलन बनाए रखता है यह संघीय सरकार और राज्यों के बीच अधिकार क्षेत्र के बंटवारे को लेकर किसी भी असहमति को सुलझाने में सहायता करता है। परिणामस्वरूप, यह संघीय संतुलन के संरक्षण की गारंटी देता है।

न्यायपालिका की स्वतंत्रता: यह न्यायपालिका की स्वतंत्रता सुनिश्चित करने में मदद करती है, जिससे विधायिका और कार्यपालिका को इसके अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण करने से रोका जा सके।

अल्पसंख्यक अधिकारों का संरक्षण: अल्पसंख्यक समूहों के अधिकारों को उन कानूनों से बचाकर जो वंचित या कमजोर आबादी के साथ भेदभाव करते हैं या उन्हें सताते हैं, न्यायिक समीक्षा बहुसंख्यक वर्ग के अत्याचार के खिलाफ एक सुरक्षा कवच के रूप में कार्य करती है।

निष्कर्ष – न्यायिक समीक्षा भारत के लोकतांत्रिक मूल्यों को बनाए रखने के लिए आवश्यक है।भारत में न्यायिक समीक्षा की भूमिका केवल असंवैधानिक कानूनों को रद्द करने तक ही सीमित नहीं है, बल्कि समाज की बदलती आवश्यकताओं और मूल्यों को प्रतिबिंबित करने के लिए संविधान की व्याख्या करना भी है। इस शक्ति के माध्यम से, भारत का सर्वोच्च न्यायालय यह सुनिश्चित करता है कि न्याय न केवल हो, बल्कि होता हुआ दिखाई भी दे, जिससे कानूनी व्यवस्था में नागरिकों का विश्वास मजबूत होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:–

1. सुभाष कश्यप (2022) हमारा संविधान: भारत का संविधान और संवैधानिक विधि, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत।
2. एम लक्ष्मीकांत (2022) भारत की राज्य व्यवस्था, मैक्रो हिल्स।
3. डी .डी .बसु (2022)भारत का संविधान: एक परिचय।
4. अब्बास और रंजय कुमार (2022) इंडियन गवर्नमेंट एंड पॉलिटिक्स, पीयरसन।
5. बेयर एक्ट : भारत का संविधान।
6. https://www.lloydlawcollege.edu.in/blog/judicial-review-india.html
7. https://www.lingayasvidyapeeth.edu.in/judicial-review-power-of-the-supreme-court-of-india/

****